लोकनाट्य परम्परा सांग

पायल
पी॰एच॰डी॰ (शोद्यार्थी)
संगीत एंव नृत्य विभाग,
कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय कुरूक्षेत्र,

लोकनाट्य परम्परा चिरन्तनकाल से निरन्तर चलती चली आ रही है । भरतमुनि ने (ई.पू.तृतीय शताब्दी) अपने ग्रंथ नाट्यशास्त्र में लोकनाट्य विषय का विशद वर्णन किया है । आचार्य भरतमुनि के नाट्यशास्त्र का प्रणयन अनायास एवं आकस्मिक ही नही हो गया था। निश्चय ही सुदूर अतीत से प्रवहमान लोकधर्मी नाट्य–परम्परा इसके सृजन का आधार रही होगी, तभी तो इस ग्रंथ में स्थान–स्थान पर लोकधर्मी प्रवृत्तियों के महत्व को उजागर किया गया है । लोक संस्कृति को साकार करने का श्रेय लोकनाट्यो को ही जाता है । लोकनाट्य ही वे साधन हैं जिनके द्वारा लोक संस्कृति और कला अर्थात् लोक–हृदय की वास्तविकता पर पहुँचा जा सकता है । लोकनाट्य लोकरंजन का आडम्बरहीन साधन है जो नागरिकों के मंच से अपेक्षाकृत निम्न स्तर का, पर विशाल जन के हर्षोल्लास से संबंधित है । ग्रामीण जनता में यह परम्परा युगों से चली आ रही है, चूंकि 'लोकञ में ग्रामीण एवं नागरिक जन सम्मिलित है । लोकनाट्य एक मिले–जुले जन समाज का मंच है । परिष्कृत रूचि के लोगो के लिए जिन नाटकों का विद्यान है, उसकी आधारभूमि लोकनाट्य है । लोकधर्मी रूढ़ियो की अनुकरणात्मक अभिव्यक्तियों का वह नाट्य रूप है, जो अपने–अपने क्षेत्र के लोकमानस को उत्लासित, आहलादित, एंव अनुप्रणित करता है 'लोकनाट्यञ कहलाता है । लोकनाट्य लोकगीत की भाँति लोकमानस को प्रिय लगने वाला साधन है । लोकमानस में होने वाला प्रत्येक स्पन्दन इसमें प्रतिबिम्बित होता है । हरियाणा में लोकनाट्य विधा सांग का प्रचलन प्राचीन समय से चला आ रहा है । हरियाणा की लोकधर्मी नाट्य–परम्परा का संधान करते हुए जिन विविध प्रकार के लोकनाटयों का

आकलन एवं अनुशीलन किया है । उन्हे सांग या सांगीत, लीलानाट्य गणगौर, कठपुतली, खौडिया, लूर, भांड, मांच, बालनाट्य, बहुरूपिये आदि नामों से अभिहित किया गया है । ये नाट्य रूप हरियाणा की लोक संस्कृति के अश्वत्य–आश्रयी बहुरंगे पक्षियों से लगते है । हरियाणा के लोकानुरंजनो में सांग या सांगीत की स्थिति निर्दिष्ट मोर की–सी है । लोकरंजनकारी यह विद्या हरियाणा के लोकमानस पर जादू– सा प्रभाव डालती है । सांग का प्राचीन नाम संगीतक है । इसी के सांगीत या सांग परम्परा सम्बद्व है । लोकमंच की यह परम्परा बहुत प्राचीन है । सांगीत, नाट्य और नृत्य तीनों का सुन्दर समन्वय इसमें है । संस्कृत नाटकों के युग में यह शैली विधमान थी । धार्मिक और सामाजिक पर्वों पर मंदिर के आंगन में या चौपाल में जमीन पर ही या छोटे–छोटे खुले मंच पर यह शैली पीढ़ी–दर–पीढ़ी लोकरंजन का महत्वपूर्ण साधन बनी रही । सांग हिन्दी शब्द 'स्वांगञ का अपभ्रंश है । सांग का अर्थ है– भेष भरना या नकल करना अर्थात् जब किसी दूसरे का रूप धारण करके जो वेश धारण किया जाता है उसे सांग कहते हैं । सांग हरियाणा की लोकनाट्य का सिरमौर है, जिसे यहां का कौमी नाटक भी कहा जाता है । गीत हरियाणवी साँगों के प्राण होते है । साँगों का ताना–बाना सतरंगें गीतों के कला तन्तुओं से ही बुना जाता है । इसके बिना सांग का ठाठ–ठट ही नहीं सकता । सांग में रागनी का जादू ही है, जो लोगों के सिर चढ़कर बोलता है । सांग श्रव्य और दृश्य दोनों है। सांग गद्य या पद्य का मिश्रित रूप है परन्तु इसमें प्रधानता पद्य की होती है, जहां गद्य में वार्त्ता और संवाद का आधिपत्य होता है वहीं पद्य में रागनी, दोहा, काफिया और सवैया आदि का समावेश होता है । सांग के मंच के चारों और बैठे दर्शक रागनियों की स्वर–लहरियों में अनुस्थूत एंव वाद्य संगीत स्नाता कथा कों देख–सुनकर मन्त्र मुग्ध हो जाते हैं । तख्ततोड़ नाच, घूंघट के फटकारे, नयनो के कटारे जनता के वर्णनातीत वाह–वाह लूटते हैं । सांग में दस–बारह पात्र होते है । पाँच–छह घण्टे तक निरन्तर अभिनीत होने वाले इस प्रदर्शन में पुरूष ही नायक–नायिका की भूमिका लिंगानुरूप वेशभूषा में निभाते हैं । सांग मे नृत्य अभिनय का प्रमुख माध्यम होता है । नृत्य की मुद्राएँ सांग के अभिनय को अधिकाधिक आकर्षक एवं संवेदनशील बनाती है। सांग में सर्वाधिक महत्ता रागनी को ही प्राप्त है । सांग में पुरूष पात्र धोती, कुर्त्ता और साफा पहनते हैं और स्त्रियाँ पात्र सलवार, कुर्त्ता और ओढ़नी धारण करती है । सांग प्रारंभ करने से पूर्व सांगी तथा साजिन्दे 'भवानी देवी मांञ की स्तुति

करते है और अपने गुरू को स्मरण करते है जिससे यह पता चलता है कि अमुल पात्र किस गुरू का चेला है । सांग लोकनाट्य में वाद्यों के रूप में चिमटा, सांरगी, घड़ा खडताल, बैंजो, हारमोनियम, नगाड़ा, बीन इत्यादि का प्रयोग किया जाता है ।

डॉ॰ दशरथ ओझा स्वांग की उत्पत्ति सर्वप्रथम हरियाणा में हुई है मानते हैं । उनका कहना है कि मध्यकाल में सादुल्ला नामक एक लोककवि हरियाणा प्रान्त में उत्पन्न हुआ । जिस प्रकार बारहवी– तेहरवीं शताब्दी के अब्दुल रहमान नामक कवि ने अपभ्रंश में 'सन्देशरासकञ की रचना की उसी प्रकार सादुल्ला नामक कवि ने अपने लोकगीतो और लोकनाट्यो की रचना की । सन् 1730 ई॰ के आस–पास हरियाणा के प्रसिद्ध लोक कवि किशनलाल भाट ने सांग कला का प्रणयन किया और सांग परम्परा की इस ज्योत को प्रज्जवलित किया । किशनलाल भाट के बाद सांग की इस श्रृंखला को आगे बढ़ाने का श्रेय बसीलाल, अलीबख्श, बालकराम, अहमद बख्श, नेतराम, दीपचन्द, सरूपचन्द, हरदेवा, बाजेभगत, मांगेराम, चन्दगीराम, धनपत सिंह, पं॰ लखमीचन्द इत्यादि को जाता है । पं॰ लखमीचन्द्र का नाम सांग कलाकारों में बड़े आदर के साथ लिया जाता है । पं॰ लखमीचन्द ने अनेको साँगों की रचना की, जो आज भी वर्तमान बहुत लोकप्रिय है । पं॰ लखमीचन्द ऐसे प्रसिद्ध सांगी कलाकार रहे हैं । जिन्होने 2500 रागनियों, एक हजार लोकधुनों की रचना की जिसके कारण इन्हे सांग–सम्राट और सूर्यकवि कहा जाता है। सांग की इस विकास प्रक्रिया ने हरियाणा की संस्कृति के विभिन्न पक्षों को उजागर किया है। लोक कथाओं और पौराणिक आख्यानों के माध्यम से इस परम्परा से लोगो को मनोरंजन और अपनी संस्कृति का ज्ञान प्राप्त हुआ ।

आज सांगों का प्रचलन कुछ कम हो गया है । इनमें परितर्वन भी बहुत हुए है । मौलिकता का दिन–प्रतिदिन ह्यस हो रहा है । यदि इसे समाज एंव संस्कार का समुचित सम्बल मिल जाए तो यह कला अपना पुराना गौरव पुनः प्राप्त कर सकती है । यह परम्परा अनादि एंव अनन्त है । सांग का आयोजन केवल मनोरंजन के लिए हो यह आवश्यक नही, मधुर उपदेश देना भी इसका उद्वेश्य होता है जिससे सामाजिक जीवन को कुरीतियों से बचाया जा सके । अतः कहा जा सकता है कि सांग लोकधर्मी स्वरूप में निहित है । यही कारण है कि लोक से संबंधित उत्सवों, अवसरों तथा मांगलिक कार्यो के समय इनका अभिनय किया जाता है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. डॉ॰ पूर्णचन्द शर्मा, हरियाणवी साहित्य और संस्कृत, हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़ ।
2. डॉ॰ पूर्णचन्द शर्मा, हरियाणा की लोकधर्मी नाट्य–परम्परा, हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़ ।
3. डॉ॰ पूर्णचन्द शर्मा, लोक संस्कृति के क्षितिज, संजय प्रकाशन, अशोक बिहार, दिल्ली–110052
4. डॉ॰ चतरभुज बंसल, हरियाणवी सांग–माला, सुकीर्ति प्रकाशन, करनाल रोड़, कैथल–136027 (हरियाणा)
5. डॉ॰ बाबूराम, हरियाणवी साहित्य का इतिहास, लक्ष्मण साहित्य प्रकाशन, दुर्गा कालोनी, जेल रोड़ रोहतक–124001
6. डॉ॰ विशिष्ठ नारायण त्रिपाठी, भारतीय लोकनाट्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–110002
7. डॉ॰ लालचन्द गुप्त 'मंगल' हरियाणा का लोक साहित्य, सूर्य भारती प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली–110006
8. रामफल गौड़, सांग–वाटिका, सुकीर्ति प्रकाशन, करनाल रोड़, कैथल–136027 (हरियाणा)